अध्याय चौबीसवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नमः॥

"इस सांसारिक जीवन में (भवसागर में) जन्म-मृत्यु का भय है। अखिल जगत के सभी प्राणी अज्ञान के अंधेरे में डूब गये हैं। आप के चरणों का स्मरण तथा भजन करनेवालों को आप ज्ञानप्रकाश प्रदान करते हैं। हे ईश्वर, तुम्हारे चरणों पर मेरी मति हमेशा स्थिर रहें।"

हे सतगुरुनाथजी, आप इस चराचर सृष्टि को चलाते हैं तथा अनंत कोटी ब्रह्मांडों के स्वामी हैं। अलौकिक तथा पूर्ण परमानंद यही आप का स्वरूप है। जो अस्तित्व में नहीं है, वह आप दिखाते है और जो अस्तित्व में है, उसे आप वहीं अंतर्लीन कर देते हैं, ऐसी आप की लीलाएँ ब्रह्मादिक भी समझ नहीं पाते। आप ज्ञानांबर में जगमगाने वाला सूर्य होकर आप जैसा कोई नहीं है तथा आप ही समस्त आनंद की धरोहर और अनगिनत गुनों की खान हैं। आप शाश्वत आनंद की जड़ होकर चारों ओर स्थित हैं और मनुष्य का शरीर धारण करके लीलाओं के रूप में क्रीडा करने के लिए आप पृथ्वी पर अवतरित हुए हैं। आप निर्गुण परब्रह्म के रूप में सर्वगत होने के कारण, जहाँ कुछ भी नहीं है लगता है परंतु अस्तित्वरूप से आप सर्वव्यापी (सभी में स्थित) हैं। इस प्रकार ऊपरी तौर पर परस्पर विरुद्ध लगने वाला आचरण केवल आप ही को शोभा देता हैं, परंतु अन्यों को वह कतई शोभा नहीं देता। जिस का कोई रूप तथा नाम नहीं, ऐसा निर्गुण ब्रह्म यहीं आप का स्वरूप है। परंतु मिथ्या होने वाला माया का भ्रम स्वीकार करके आप सगुण ब्रह्म हो गये (यानी देह धारण किया)। आप का सत्य स्वरूप नाम रूप रहित निर्गुण ब्रह्म है (जिसका ज्ञानेंद्रियों को अनुभव नहीं होता), परंतु मिथ्या माया का भ्रम स्वीकार करके अनेक नाम रूप धारण किए हुए ब्रह्म के रूप में आप ही सभी में विद्यमान हैं। इसका अर्थ, "नहीं" तथा "है" ये परस्पर विरोधी दो बातें केवल आप ही में हैं, जो आप ही को शोभा देती हैं। हे सतगुरुजी, जो सचमुच आप का अंतःकरण जानते हैं, उन्हें ही संत कहते हैं, जो पूर्ण रूप से अपना अंतःकरण आप को अर्पण करके आप के भक्त होते हैं। जो सांसारिक सुख की मनोकामना करते हैं, आप उन्हें सांसारिक सुख देते हैं, क्योंकि आप अच्छी तरह से जानते हैं की सांसारिक सुख का उपभोग लेकर एक

न एक दिन मन ऊब जाता है; उसपर ऐसे लोगों को, फल की कामना किए बगैर कर्म करने का मार्ग दिखाकर आप उनका उद्धार करते हैं। अब एक सुरस कथा सुनिए।

हुबली में बसवण्णा नाम का एक सज्जन था। गुरव्वा नाम की पत्नी तथा दो पुत्र और दो कन्याएँ उसके परिवार के सदस्य थे और वह अत्यंत गरीब था। जो कामधंदा वह करता था, वह उस के हाथ से छूट गया और दूसरा कामधंदा न मिलने के कारण वह यंत्रणा से कंगाल हो गया; और "कंगाली में आटा गीला," इस कहावत के अनुसार अकाल भी पड़ गया। घर में जो थोडे बहुत पैसे थे वे खर्चकर उसने अनाज खरीदा और जैसे तैसे तीन दिन बिताए। एक दिन घर में अनाज का एक दाना भी न था, पूरे गाँव में चक्कर लगाने के बावजूद भी उसे एक मुट्ठी अनाज नहीं मिल पाया। गाँव में घूमकर घर आते ही बच्चे दौड़ते हुए उसके पास आए और "खाने को कुछ दो" कहने लगे। "हमें भूख से कंगाल हुए हैं, क्या हम भूख से मर जाएँ?" बच्चों की ऐसी बातें सुनकर माँबाप के आँखो में आँसू आ गये। घर में ऐसी दुर्दशा होने के बावजूद भी वे दोनो कभी भी दूसरों के घर भीख माँगने नहीं गये; भीख माँगना उन्हें सचमुच ही लज्जाकर लगता था। वे कहते थे की जब ईश्वर ने ही हमें अन्न नहीं दिया तब दूसरों को हम क्यों कष्ट दें? दुख भोगने के लिए ही हमने जन्म लिया है तो उसे हम कैसे टाल सकते हैं? दो दिन खाने के लिए एक दाना भी न मिलने के कारण बच्चें भी भूखे ही रहे। दूसरे दिन रात को एक पुत्र तथा एक कन्या भूख से तड़प तड़पकर मर गए और उनकी मृत्यु से उनकी माँ शोकसागर में डूब गयी। मृत बच्चों की अंत्येष्टि के लिए बसवण्णा जब बाहर गया था, तब बाकी दोनों बच्चों को सोया हुआ देखकर गुरव्वा घर के बाहर निकल गयी। बच्चों की मृत्यु के शोकसागर में डूबने के कारण वह भ्रमी हो गयी थी और आसपास उसे सँभालने वाला कोई भी न था। उस समय वह एक कुए के पास गयी। बच्चों की अंत्येष्टि पूरी करके घर लौटकर बसवण्णा ने जब देखा तो पत्नी घर में नहीं थी और दोनों दयनीय बच्चे रो रहे थे। आसपास खोजने के बावजूद भी उसे पत्नी कही दिखाई न पड़ी और बच्चे भी उसके पीछे ही चले आ रहे थे। उन्हें लेकर वह पत्नी की खोज में घर से बाहर निकल पड़ा। कुछ समय के पश्चात उसने

दूर से अपनी पत्नी को देखा, परंतु दोनों के बीच बहुत फासला होने के कारण वह कुछ भी नहीं कर पा रहा था। देखते देखते वह कुए के किनारे पर चढ़कर अंदर कूदने के लिए तैयार हो गयी, लेकिन इतने में एक चमत्कार हो गया। उसी क्षण वहाँ एक साधु प्रकट हुआ और उसने उसे पकड़कर खींच लिया। अति शोक के कारण पगलायी हुई गुरव्वा तत्काल बेहोश हो गयी। इतने में पति दौड़ता हुआ वहाँ आ पहुँचा और नीचे गिर पड़ी मृतकल्प गुरव्वा को उसने देखा। वहाँ खड़े साधु ने कृपादृष्टि से गुरव्वा की ओर देखते ही वह तुरंत उठ बैठी और मृत बच्चों का स्मरण होने के कारण फूट फूटकर रोने लगी। "खाने को कुछ भी न मिलने के कारण दो बच्चे मर गये, बाकी के दो बच्चे मृत्यु के मार्ग पर हैं, यह सब मुझ से देखा नहीं जाता, इसलिए मैं मरने जा रही हूँ," ऐसा कहते हुए वह फिर एक बार उठ खड़ी हुयी। इतने में साधु ने पास आकर उसके माथे पर उँगली से स्पर्श करते ही वह तत्काल अपना दुख भूल गयी।

उसके पश्चात पति ने हाथ पकड़कर गुरव्वा को उठाया और वे सभी घर लौटने के लिए तैयार हो गये, उस समय साधु के उपकार को स्मरण करके गुरव्वा ने उसे अपने घर आमंत्रित किया। बच्चों के साथ घर लौटने के पश्चात उसने साधु को एक आसन पर बिठाया। उसने साधु को प्रणाम किया परंतु साधु की पूजा करने हेतु घर में पूजा का कुछ भी सामान नहीं था। उस समय बसवण्णा ने कहा, "हे महास्वामी, हमारे पूर्वजन्म के पुण्य के कारण आप हमारी रक्षा करने हेतु प्रकट हुए, परंतु मैं बहुत अत्यंत अभागा हूँ। इस समय आप जैसे महात्मा की पूजा तथा नैवेद्य करने के लिए घर में कुछ भी नहीं है। फिर भी मेरी आप से बिनती है की आप का आशिर्वाद हमें मिले।" उसपर साधु ने कहा, "इस समय मुझे भूख लगी है, इसलिए कुछ खाने के लिए चाहिए।" विवशता के कारण बसवण्णा के आँखों से आँसू बहने लगे; उसने साधु को अपनी परिस्थिति का विवरण दिय। साधु ने कहा, "देख तो लो की तुम्हारी पेटी में कुछ पैसे है या नहीं! अगर हो तो यहाँ ले आओ।" बसवण्णा ने कहा, "पेटी में बिलकुल ही पैसे नहीं है, परंतु आप की आज्ञा पालन करने हेतु देख लेता हूँ।" जब बसवण्णा ने पेटी में देखा तब उसे केवल एक पैसा दिखाई पड़ा, वह उसने साधु को दे दिया। तब साधु ने कहा, "यह पैसा लेकर तुम बाजार जाओ और खाना बनाने के लिए

जो सामान चाहिए वह सब लेकर आओ।" बसवण्णा ने कहा, "मैं बाजार जरूर जाऊँगा, परंतु इस एक पैसे से चावल के चार दाने तक नहीं मिलेंगे। परंतु आप एक महात्मा हैं और आप की महिमा मैं नहीं जानता।" ऐसा कहते हुए बसवण्णा बाजार गया। वह एक पैसा उसने धोती में गाँठ बाँधकर रखा था। दुकान जाकर धोती की गाँठ खोलकर जब उसने देखा तो उस पैसे का रूपांतर एक सोने की मुहर में हुआ था! उसे लगा की अति हर्ष से वह पागल हो जाएगा। बनिये को मुहर देकर उसने सभी सामान खरीदकर धोती में बाँध लिया। बाकी के सारे पैसे तथा खरीदा हुआ सामान लाकर उसने साधु के सामने रख दिया। साधु ने सब सामान गुरव्वा को सौंपकर कहा, "जल्द से जल्द मुझे खाना बनाकर खिलाओ।" साधु की बात सुनकर गुरव्वा तेजी से रसोईघर में जाकर खाना बनाने लगी। खाना बनाकर उसने साधु को खाना परोसा तब उसने कहा की प्रथम बच्चों को खाना परोसा जाए। बच्चों के भोजन के पश्चात साधु, बसवण्णा तथा गुरव्वा के साथ भोजन करने बैठा। सभी के भोजन के पश्चात साधु बाहर घर से जाने लगा। तब घर के सभी सदस्य भागकर उसके चरणों पर जाकर गिर पड़े और उससे आशिर्वाद माँगा। साधु ने कहा, "आप सभी का कल्याण हो। अब मैं सिद्धाश्रम की ओर चलता हूँ।" प्रेम से गद्‌गद्‌ होने के कारण उस दंपति के नयनों से अविरत अश्रुपात हो रहा था। साधु के जाने के पश्चात सभी अंदर आए। बसवण्णा ने कहा, "यह साधु अन्य कोई भी न होकर सिद्धारूढ़ स्वामीजी ही है, इस में कोई संदेह नहीं।" उस समय उसकी पत्नी ने कहा, "हम आज तक कभी भी सिद्धारूढ़जी से मिलने नहीं गए, फिर हमें उनकी सहायता कैसे हो सकती है, ऐसा मुझे संदेह हो रहा है।" तत्काल वह पति पत्नी सिद्धाश्रम पहुँचे, वहाँ सिद्धारूढ़जी को देखते ही उन्होंने कहा, "यही है वह साधु, जो हमारे घर आया था। तुरंत उन्होंने सिद्धजी को साष्टांग प्रणाम किया। सिद्धनाथजी ने उन्हें पास बुलाकर कहा, "तुम्हारे पास दस रुपये निश्चित ही होंगे, उन दस रुपयों से तुम व्यापार आरंभ करो।" बसवण्णा ने उनकी आज्ञा का पालन करते ही सिद्धजी की कृपा से व्यापार में बहुत लाभ होकर वह एक धनवान व्यापारी बन गया। वह जोड़ा प्रतिदिन सिद्धाश्रम जाता था, कभी कभी सतगुरुजी को घर आमंत्रित करते और कहते, "यह सारी संपत्ती हमें सिद्धजी की कृपा से ही प्राप्त हुई है।

यह आरूढ़स्वामी (सिद्धनाथजी को प्रेम से भक्त 'आरूढ़स्वामी' के नाम से भी संबोधित करते हैं) हमेशा भक्तों के काम तो आते ही हैं, परंतु भक्त न होने वाले दीन जनों की भी संकट के समय मदद करते हैं।"

अब इस कहानी का लक्ष्यार्थ सुनिए। बसवण्णा को जीवात्मा तथा उसकी पत्नी को उसकी बुद्धि समझें। ये दोनों ही इस कहानी में वर्णन किया हुआ जोड़ा है। विवेक, विरक्ति, शांति तथा दम ये उनके चार बच्चे समझें, जिन्हें वे दोनों बहुत प्रेम करते थे। विषयभोग के बारे में अबतक विरक्ति नहीं हुई थी, ऐसी स्थिति में स्वरूपधन (आत्मज्ञान) कैसे प्राप्त होगा? देव तथा धर्म के प्रति आजतक पूर्ण रूप से अज्ञानी होने के कारण वह जीवात्मा मानो झुलस गया था; इसलिए जीवात्मा तथा ईश्वर इन दोनों को एकरूप बनाने के लिए आवश्यक जो मन को भाव होता है, वह भाव रूपी भोजन उन्हें नहीं मिला था। दम तथा शांति ये दो बच्चे, खाना न मिलने के कारण माँबाप के सामने ही मर गये। बुद्धि रूपी माँ चिंताग्रस्त होने के कारण वह संसार रूपी कुए के पास पहुँची। वह संसार रूपी कुए में कूदने वाली ही थी की इतने में ज्ञान रूपी साधु वहाँ प्रकट हुआ। उसने उसे खींचकर बाहर करते ही जीवात्मा तेजी से विवेक तथा विरक्ति के साथ वहाँ आ पहुँचा। उसने भी ज्ञान रूपी साधु को देखा। बुद्धि को सारी घटनाओं का स्मरण होने से हुआ दुख ज्ञान रूपी साधु ने अपने स्पर्श से भुलाया। ज्ञान रूपी साधु को घर ले जाते ही उसे भक्ति की भूख लग गई, तब उसने एक भाव रूपी (केवल भक्तिभाव) पैसा जीवात्मा तक पहुँचाया। उस भाव से आत्माकार (आत्मा का स्वरूप) करने वाली मन की वृत्ति का सामान मिलते ही, जीवात्मा उसे ले आया और बुद्धि ने उससे पकवान बनाए। उसके पश्चात विवेक तथा विरक्ति इन्हें सशक्त करके उसके पश्चात ज्ञान रूपी साधु, जीवात्मा और बुद्धि ने मिलकर ब्रह्मसुख का भोजन एकरूप होकर आस्वादित किया। उसके पश्चात बुद्धि और जीवात्मा ने मिलकर ज्ञान रूपी साधु के स्थान की खोज की और उससे स्वरूप रूपी (आत्मज्ञान) धन प्राप्त करके वे प्रतिदिन ज्ञान रूपी साधु को भजने लगे। इस प्रकार के इस कहानी के तात्पर्य पर चिंतन करके मुमुक्षुओं को जल्द से जल्द भवसागर के पार हो जाना चाहिए। सतगुरुनाथ सिद्धनाथजी, भक्तों के मन में भरा अज्ञान का तथा

जीवात्माओं को दुखदायी इस भवसागर का निरसन करेंगे। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह चौबीसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥